अधर तुम्हारे
स्वर मेरे

सुधि प्रकाशन, जयपुर ।

अधर तुम्हारे स्वर मेरे

कवि : जगदीश चतुर्वेदी

प्रस्तावना : डा० हरि चरण शर्मा
ऐसोसियेट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
(राजस्थान विश्व विद्यालय)

चम्पा लाल राँका एण्ड कम्पनी
चौड़ा रास्ता, जयपुर।

1993
(सर्वाधिकार सुरक्षित)

जगदीश चतुर्वेदी

पहला संस्करण

मूल्य
100 रुपये

आवरण
भगवान सिंह "तन्हा"

प्रकाशक
सुधि प्रकाशन
कालवाड़ रोड, झोटवाड़ा,
जयपुर–302 012

वितरक
चम्पा लाल रांका एण्ड कम्पनी
धामाणी मार्केट, चौड़ा रास्ता,
जयपुर–302 003
फोन : 75241

मुद्रक :–
दिव्या प्रिंटिंग एण्ड बाइन्डिंग वर्क्स
243, तिलक मार्ग जगन्नाथ पुरी,
झोटवाड़ा जयपुर–302 012

(आवरण अजन्ता आफसेट एण्ड पैकेजिंग्स, लि. 1, बहादुर शाह जफर मार्ग, नयी दिल्ली में मुद्रित)

आस्था और जिजीविषा का कवि चतुर्वेदी

कविता अनुभूति की आत्मजा है, किन्तु हरेक अनुभूति मे कविता बनकर आने की क्षमता नही होती। जो अनुभूति बार-बार उमड-घुमड कर मानस को आन्दोलित करती रहती है, हमारे लिए असह्य हो जाती है, वही कविता की शक्ल मे ढलती हुई कागज पर उतरने के लिए मचल उठती है। हा, यह "मचलन" ही किसी को कवि, किसी को समीक्षक और बहुतों को सहृदय पाठक बना देती है। जाहिर है कि कवि के भीतर की उमडन-घुमड़न अधिक वेगवान होकर शब्दों को पकड़ती है, उन्हे छीलती है और घिस-घिसकर भाव के अनुरूप बनाती हुई अपना सहयात्री बना लेती है। एक वाक्य में कहूं तो यह कि जो सहा नही जाता, वही बाहर आने को मचल उठता है। ऐसा ही भाई जगदीश चतुर्वेदी की कविताओ मे है।

चतुर्वेदी जी की कविताओ को पढते समय मुझे बार-बार यही लगा है कि इनमें एक दर्द है, एक ऐसी पीड़ा है जो धीरे-धीरे सघन होती गई है। और फिर भीतर की कारा में न समा पाने के कारण अपनी ही मुक्ति के लिए बाहर आ गई है। यह मुक्ति ही सच्चाई है, जीने का ईमानदार तरीका है। जिस कवि में ऐसी ईमानदारी हो, अपने प्रति विश्वास हो वही सही व सच्चा कवि होता है। कोशिश व्यक्ति को कवि नही बनाती है। कवि बनाती है-भीतर की आग, वह पीडा जो असली हो। चतुर्वेदी जी मे वह तपिश है, वेदना का वह भाव है जो बाहर की दुनिया ने, उनके आस-पास के परिवेश ने उन्हे दिया है। यह उनका अनुभूत है जो कविताओ की शैली मे सरगम सहित "अधर तुम्हारे स्वर मेरे" के रूप मे हमारे सामने है। आज जब बहुत से केवल जोड़-तोड़, बिठाकर अपने को कवियों की पक्ति मे खडा करने के लिए कविता के नाम पर बकवास लिख रहे है, तब किसी अच्छी रचना का सामने आना एक सुखद अनुभव से गुजरना होता है। यह अतिशयोक्ति नही, औपचारिक प्रशसा नही, एक सच्चाई है कि भाई चतुर्वेदी जी की ये कविताए एक ईमानदार कवि की सर्जनाए है।

चतुर्वेदी जी की जो कविताए इस संग्रह के माध्यम से हिन्दी पाठक के सामने आ रही है, उनमे तरुणाई का जोश है, एक ऐसा सवेदन है, एक ऐसी

ये कविताएं बोलती हैं, इनका स्वर साफ और तेज है। इनमें जो संवेदना है, वह यौवनोचित आवेग, प्रणय की सच्चाई और उससे जुड़े दुनिया के सवालों को उठाती हुई पाठक को यह सोचने के लिए प्रेरित करती है कि यहा यदि एक ओर दो सपने हैं, तो दो सौ सत्य भी है । इनमें से किसी एक को भी उपेक्षित नही किया जा सकता है। सपनों की दुनिया ही सत्य का आकार ग्रहण करती है। हां, शर्त यही है कि सपने सपने हों यानी कि वे धरती के हों । संग्रह की अधिकांश गीतात्मक कविताओ मे एक व्यक्ति के सहारे दुनिया खुलती चली गई है। अनुभूतियों की बेबाक अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है । यही कारण है कि इन कविताओं में आनुभूतिक ईमानदारी अभिव्यक्ति की प्रसन्न शैली में अभिव्यक्त हुई है। शब्द का अर्थ से, अर्थ का भाव और कल्पना से जो ग्रथिबधन इन कविताओं मे हुआ है, आज बहुत कम देखने को मिलता है। इनमे आये शब्द मस्वर हैं, वे बोलते है। उनके भीतर की अरुणिमा, व्यथा, बेचैनी और कसमसाहट उनसे झलकती है।

कविता चाहे व्यथा से शुरू हुई हो, चाहे संघर्ष से, वह आस्था पर जाकर समाप्त हुई है। कवि की यह आस्था-चेतना जीवन का एक अनिवार्य संदर्भ है। आस्था के बिना कभी भी कोई जीवन 'जीवन' बना नही रह सकता है । कवि के इस दृष्टिकोण से उन कवियो को प्रेरणा लेनी चाहिये जिनके मन बुझ गये हैं, जो जीने के नाम पर अपनी जिन्दगी को ढो रहें हैं और हर पल यह शिकायत करते नही थकते कि जिन्दगी मे धरा क्या है ? मैं सोचता हूं कि जिन्दगी में होता तो सब है, पर हमें अपने मनचाहे को भीतर से बाहर लाना पड़ता है। यही साधनात्मक प्रयत्न है जिसकी आज हमें बड़ी जरूरत है। कविता जिन्दगी से उपजती है और जिन्दगी के लिए होती है। चतुर्वेदी जी की कविता ऐसी ही है। उम्र के जिस द्वार पर आज चतुर्वेदी जी हैं, उस पर पहुंच कर व्यक्ति मौन हो जाता है। यह मौन उसकी पराजय नही होता, बल्कि अपने द्वारा तय की गई यात्रा का 'विमर्शक्षण' होता है। यह द्रष्टा का मौन होता है। उसी मौन में कभी अतीत उसे कुरेदता है, कभी वर्तमान उसे छेड़ता है, अपनी भविष्यधर्मी दृष्टि से अनागत पर नजर टिकाये रखता है। चतुर्वेदी जी भी इसी स्थिति मे हैं । उनकी चेतना सहज हैं, वे निराश नही है। भले ही जिन्दगी ने उन्हें बहुत कुछ झेलने को बाध्य किया हो पर वे तो अपनी जिन्दगी

के एक खास दौर को याद करते हुए आज भी अपनी इन पंक्तियों के साथ हैं—

"ज्वार जवानी का आया तो दुनियाँ को बन गये अजूबा
यह भी हुआ कि हमने पी तो सारा जगत नशे में डूबा" ।

उम्र के बोझ से चेहरे पर पडी चन्द सलवटों का नाम बुढ़ापा नहीं है। बुढ़ापा वह है जो मन को बुझा दे और उन सपनों को भुला दे जो जिन्दगी के लिए अहम होते है। फिर सवेदनशील कवि बूढा कहाँ होता है ? वह अपने सामने खड़ी पीढ़ी में अपना मन देखता है या कहूँ कि देखना चाहता है। यही चाहत उसे जिलाये रखती है। चतुर्वेदी जी के गीत इसी चाहत को रेखांकित करते है।

मैं तो कविता का एक सामान्य पाठक हूँ और मैंने चतुर्वेदी जी की कविताओं को इसी भाव से पढ़ा है, समझा है। हाँ मुझे यह अवश्य लगता है कि ये एक खास किस्म की – एक खास रंग की कविताएँ हैं। इनसे झाकते कुछ रग ऐसे भी हैं जो इनमें खिल नहीं पाये है। जाहिर है कि कवि ने उन रगो की कविताओं को एक अलग जिल्द के लिए रख छोड़ा होगा। यह मुझे इसलिए लगा कि ये कविताएँ उस विद्रोही, साहसिक और निर्मम यथार्थ की ओर कहीं कहीं सकेत कर देती है। मैं इस विश्वास के साथ कविताओं और पाठकों के बीच से ओट हो रहा हूँ कि चतुर्वेदी जी हमें अपना दूसरा कविता-सग्रह आने का शीघ्र अवसर प्रदान करेंगे।

-डॉ. हरिचरण शर्मा
ऐसोसियेट प्रोफेसर
राजस्थान विश्वविद्यालय

बात कुछ कविता की, कुछ कवि की

कविता से मेरा सम्बन्ध कुछ अजीब सा रहा है। यों विधिवत मेरा कोई कविता–गुरु नहीं था, किन्तु आगरा की एक कविगोष्ठी मे जब साहस करके मैंने कविता पाठ किया तो गोष्ठी अध्यक्ष डॉ. पद्मसिंह शर्मा कमलेश ने मुझे परामर्श दिया कि लिखते रहो, चाहे फिर उसे फाडकर फेंक दो। इसे गुरु आज्ञा मानकर बहुत सी कविताएं फाड़कर फेंकी। जो एक नोट बुक मे लिखी रह गयी, वे सामान के साथ खो गयी। कुछ कविताए रद्दी के कागजो के पीछे लिखी थी, वे अनजाने में कूड़े मे फिक गयीं या अगीठी मे जला दी गयी। जयपुर में बड़ी धूमधाम से दैनिक 'नवयुग' शुरू हुआ, उसके सम्पादक ऋषि कुमार मिश्र के आग्रह पर कुछ कविताएं स्वच्छ हस्तलिपि में लिखकर उन्हें दी, वे उनके अखबार की रद्दी के साथ कब बिकी, पता ही नहीं चला। डॉ. मनोहर प्रभाकर ने "राजस्थान विकास" मे मेरे दो गीत छापे, जिनमें से एक की प्रति मेरे पास भी नही थी और मेरी यह जिज्ञासा स्वाभाविक थी कि वह गीत उन्हें कहाँ मिला? तब उन्होने एक और मित्र सीताराम झालानी के बारे मे बताया जिन्होने चार आने में यह "रद्दी" एक पंसारी से वापस खरीदी थी।

और आगे चलकर भी कविता मेरे दुर्भाग्य का कारण बनी और एक अच्छी खासी नौकरी इसी के कारण जाती रही। लेकिन कविता का साथ नहीं छूट सका। अनेक बार रूठकर मन ही मन कसम खायी कि अब नहीं लिखूँगा। लेकिन बार-बार आत्महत्या का प्रयत्न करने वाला मर कहाँ पाता है? कमबख्त आज भी मुँह लगी है। तब से मुँह लगी है जबसे 1943-44 मे मथुरा में गीतकार शैलेन्द्र- तब शकर राव-मेरे सहपाठी रहे, और 1944-45 मे कानपुर मे नीरज मेरे समकालीन छात्र रहे, दूसरे कॉलेज मे। इसके बाद का जीवन राजस्थान में गुजरा है। यहाँ मैं बूंदी के अल्प प्रवास में मेरे अनन्य मित्र और सखा रहे, मनमोहन ठाकोर का विशेष उल्लेख करना चाहूंगा, जिनके कारण मैं घोषित और मान्य कवि बन सका। मनमोहन और अपनी भाभी के कारण रागेय राघव से भी मेरा परोक्ष परिचय लम्बा और प्रत्यक्ष परिचय स्वल्प रहा। इस सग्रह की अधिकाश कविताएं 1948 से 1954 के बीच की हैं और तब से लिख रहे राजस्थान के सभी कवि मेरे सहयात्री हैं।

साठ की आयु पार कर लेने पर और कृतित्व के नाम पर किये गये सवालो पर, यह सोचा कि दो-चार संकलन छपा लिये जायें। फिर जो होगा

देखा जायेगा। हो सकता है इस "तुमुल कोलाहल कलह में" किसी एक किताब को कोई अच्छा सा पाठक मिल जाये। यह असम्भव तो नही है, किन्तु अधिक सम्भव भी नही है। पुस्तक एक ऐसे आर्थिक दुश्चक्र से इन दिनों गुजर रही है कि किसी भोले पछी पाठक का उसके दायरे में आ पाना प्राय. आकाशकुसुम की कामना करने जैसा है।

एक और कारण भी बना इन्हे जैसी की तैसी अपने से "विदा" करने का, लोकार्पण का। यद्यपि इन कविताओ में उलझा गुथा मैं कही हू अवश्य, फिर भी इन्हे गाने, सुनाने का चाव बहुत आग्रह करने पर भी अब नही होता। वैसे ये सभी गीत मैंने झूम कर खूब गाये है, और मेरे साथ पूरी महफिल भी झूमी है। किन्तु इन दिनो जैसी मूढता, पाषाणता इस समाज पर आयी हुई है, वैसी ही कुछ मुझ पर भी छा गयी है। एक खीझ, झुंझलाहट, आक्रोश और हताश टूटे हुए स्वप्नों के अतिरिक्त जिन्दगी का और कुछ हासिल नही नजर आता। ये कविताए उपेक्षित, दीमक और चूहो के आक्रमण से ध्वस्त एक बक्से में बन्द पड़ी थी। मेरी छोटी बेटी, सुधि चतुर्वेदी ने इनमें से कविताए छांटी जो बचायी जा सकती थी। धीरे-धीरे महीनो श्रम करके उसने इनकी प्रतिलिपि तैयार की। पिछले नववर्ष पर (1991) उसने मुझे 4-5 डायरियाँ भेट की। मेरे कुछ युवा कवि मित्र-डॉ. रमाशकर शर्मा, विक्रम सिह गढवाली, अजय अनुरागी आदि बोले, ये कविताएं बहुत अच्छी हैं। उधर 16 वर्षों की हाड़ौती शोध प्रतिष्ठान की कारा से मुक्त होकर मेरी पाण्डुलिपि का पार्सल मुझे मिला और यह निश्चय हो गया कि इनमें से 51 गीत छांट कर पहले प्रकाशित कराये जायें।

सोचता हूँ, यह अवस्था का प्रभाव है। तरुणाई में लिखे गये गीत तरुणो के लिए होंगे। आज जिन्दगी गजल नही, एक फटी हुई कमीज है। लेकिन सभी कमीजें तो फटी हुई नही हैं। एक समूची नयी पीढी सामने है और रहेगी। अपनी जिन्दगी का वह दौर याद आता है, जब हम भी नयी पीढ़ी में थे :

"ज्वार जवानी का आया तो दुनियाँ को बन गये अजूबा
यह भी हुआ कि हमने पी तो सारा जगत नशे में डूबा"।

उन दिनो हमारी जिन्दगियो में काव्य था, संगीत था, अट्टहास थे, उमग थी, खुला आकाश, सपनो और कल्पनाओं से भरपूर जीवन था। आज की नयी पीढ़ी का जीवन हमें निस्तेज, कुंठित और थका बुझा सा लगता है।

इसे कोई तारीख तो नही दी जा सकती, लेकिन देखते देखते ही कुछ बदलाव आया है। नयी पीढ़ी में वह 'रसिकता' वह 'सहृदयता' नही है जो प्रतिदिन जन्म लेते काव्य और संगीत में विभोर हो सके। सबका व्यापारीकरण, व्यावसायीकरण हो गया, कलाओं का भी। टी वी. और फिल्मों के अलावा कला-सगीत और भी है। हम नाटक और रगमच का विकास नही कर पाये। सिनेमा और सोप आपेरा का हमने खूब विकास कर लिया। टी. वी. या सिनेमा पर जब किसी महान कृति को प्रस्तुत किया गया, तो वह प्रयास भोंडा तो था ही, असफल भी सिद्ध हुआ। हृदय की गहराइयो और शब्द कल्पना की ऊँचाइयों को छू पाने मे छोटे और बड़े दोनों ही परदे असमर्थ रहे। वे एक स्तर से इधर-उधर होने की जोखिम नही उठाते। इस छाया मे सजीव स्पदन नही है।

नयी पीढी से उठी बात नये युग की भूल भुलैया में भटक गयी। हम नयी पीढ़ी मे जीवन का भरपूर, उद्दाम, सम्पूर्ण उद्वेग देखना चाहते हैं। यह निष्प्राण, बुझी-बुझी, लिपीपुती सूरतें हमें भविष्य के प्रति आस्थावान नही बना पाती। हम नही जानते ये नये लोग क्या करते है, किन्तु फिर भी ये मिल बैठ कर कभी गाते होगे, हँसते होगे, गहरी गहरी बातें करते होगे। ऐसे ही क्षण जब एकांत मे मिलें, तो ये कविताएं बड़े काम आयेगी। इन्हे गाने, गुनगुनाने को मन करेगा। गा लीजिये।

अपने समय मे कुछ वाद विवाद किये, कुछ 'वादों' को कधों पर ढोकर भी चले। कुछ अनुभव से समझा, कुछ साहित्यकारों की "स्वीकारोक्तियो" से। वाद कुछ नही, कुछ लोगों का आन्दोलन है जिन्हें सोचते-सोचते कोई बटेर हाथ लग जाती है और वे फतवा दे बैठते है कि कविता अथवा कला को ऐसा-ऐसा होना चाहिये, अन्यथा वह कूड़ा कचरा मात्र है। जैसा कहा, कुछ वाद मुझ पर भी प्रभाव डालने आये। लेकिन उस 'वाद' के पीछे जो राजनीतिक सगठन था, उसका संरक्षण मुझे कभी नही मिला। धीरे-धीरे भीड़भाड़ मे मै खो गया, अकेला पड़ गया।

अब एक और जीवन पाना चाहता हूं, इस पुस्तक के माध्यम से। यह जीवन वही भोला, निष्कलुष मन वाला पाठक देगा, जो शायद कही हो!

—जगदीश चतुर्वेदी

तो लिख ही दूँ ?

सांस से सुलग रही चिनगारी
ताकि चमके वो बनके अंगारा
उड़ गयी राख आग साफ हुई
गूंजता है जलन का टंकारा !

कर लो जितना करोगे अंधियारा
हर अमा को करेंगे दीवाली
हम भी आजन्म रहे विषपायी
खोटे गुड़ की शराब कर डाली !

अब नहीं चाहिये हमें कुछ भी
हम को मत अपनी मेहरबानी दो
सर चढ़ा कर्ज बस अदा कर दो
आख का एक बूंद पानी दो !

तुम वही लोग हो जो सिर धुन कर
झूम कर बोले खूब गाता है
और मुड़ कर न फिर कभी देखा
क्यों यह अपनी ही जान खाता है !

क्या हुआ, क्यों हुआ है यह घायल
कोई भीतर की चोट खायी है ?
कौन से सौदे मे ठगाया है
क्यों बना यह अरे, सौदाई है !

तुमने ही हमको पताका की तरह
हर शिखर पर कभी फहराया था
और तुमने ही अपना दिल कह कर
सबसे प्यारा हमें ठहराया था !

हम तो अब भी वही हैं, लेकिन तुम ?
जाने दो जो हो, अब कहें क्या हम
कुछ नहीं था, कभी न होगा कुछ
फिर हमारा करोगे क्या तुम कम ?

मरके हर बार जिन्दगी की ही
हर चिता पर शपथ उठायी है
जो स्वयं सहज भावना उपजी
दी उसी धर्म की दुहाई है !

यह तुम्हारी बनी ठनी संस्कृति
यह चकाचौंध, जहर हंगामी
क्रूर संहार किसी उपग्रह के
हम नहीं इनमें किसी के हामी !

एक स्वर कठिन गिरि विदारित कर
किसी 'झरने' सा फूट जो पाये
एक पद कह दो सुर मीरा बन
काल के वक्ष पर लिखा जाये !

ये छपाई के मशीनी जल्वे
ये भांति भांति के अभिनव मुद्रण
व फूल पत्तों, रूप रंगों के
आवरण-सज्जा-शिल्प युत चित्रण !

ये सभी माध्यम बड़े मद्धम
इनसे कैसे जुड़ेंगे मन से मन
कैसे छाया के सहारे कोई
प्राण में जो बसी, छुए धड़कन ?

अगर 'सहित' न हो तो बोलो फिर
कैसे साहित्य रचा जायेगा ?
कैसे साहित्य बहरी महफिल में
अपनी आवाज बचा पायेगा ?-

हम हों, तुम हो, सभी हों, वे भी हों
एक अपनत्व की जमे महफिल
कान क्या, सब सुनें लगा कर मन
बोल फूटें, हजार उछलें दिल !

आज तो अलग थलग द्वीप बने
व्यक्तियों के हुजूम अनजाने
पढ़ते अखबार, देखते टी. वी.
और कैसेट से सुन रहे गाने !



तो लिख ही दूं, जो आज तक कहा नहीं गया
लिखा था आज तक कि जो सहा नहीं गया
ये छंद के बिखरते घुंघरुओं की खनक है
जो बज रहे हैं क्योंकि चुप रहा नहीं गया !

— जगदीश चतुर्वेदी

(गीतों का रचनाकाल 1948-54)

अंतरंग

एक मेघ दे दिया तुम्हें सावन का

लो, एक खण्ड दे दिया तुम्हें जीवन का !
तुम प्याले की हाला से, स्मृति में छलके,
तुम आज सत्य हो गये, असम्भव कल के !

यह रिमझिम की रेखा कपोल पर देखो,
औ' एक मेघ दे दिया तुम्हें सावन का !
लो, एक खण्ड दे दिया तुम्हें जीवन का !

यों, टूट-टूट कर जीवन बिखरा जाता,
पर स्वर्ण प्रणय का तपता, निखरा जाता,

यह सौरभ की रागिनियां उठीं सुमन से,
और एक गीत दे दिया तुम्हें मधुवन का !
लो, एक खण्ड दे दिया तुम्हें जीवन का !

×

तुम मूंद न सके मेरे नयनों में चंचल,
तुम रोम-रोम, तृण-तृण, कण-कण मे, पलपल !

भर गये सिन्धु से ओर छोर जीवन के,
लो, ज्वार-हार दे दिया तुम्हें ही मन का !
लो, एक खण्ड दे दिया तुम्हें जीवन का !

तुम नहीं, कल्पना थी तुम्हारी

तुम्हारे लिए प्यार में प्राण बाँधे !
अरे, चाँद था, फूल थे, मधुनिशा थी,
कि इंगित-सुलभ स्वर्ग की हर दिशा थी !

मगर क्या कहूँ, प्राण पर छा गये तुम,
मनांचल बिछा, मूक अरमान बाँधे !
तुम्हारे लिए प्यार में प्राण बाँधे !

हृदय-रक्त से विश्व के शूल भींगे,
प्रणय-सिन्धु उबला, पलक-कूल भींगे !

मगर क्या कहूं, बलवती प्रेरणा को,
कि चिनगारियाँ और अपमान बाँधे !
तुम्हारे लिए प्यार मे प्राण बाँधे !

×

तुम्हें कामना ने सुलभ स्वर्ग माना,
तुम्हें साधना ने सुगम लक्ष्य जाना !

मगर, तुम नहीं, कल्पना थी तुम्हारी,
कि जिसने अनायास अनुमान बाँधे !
तुम्हारे लिए प्यार में प्राण बांधे !

कंठ तुम्हारा धुन मेरी है

तन का तन से प्यार नहीं यह,
मन का मन से प्यार नहीं यह,
मेरा तुमसे प्यार है !

मेरी दुनियां और कहीं है, और तुम्हारी और कहीं,
दो तन या दो मन रखने को है जीवन में ठौर नहीं,
तुम अपनी दुनियां की दासी, मैं चाकर अपने जग का,
तुमको अपनी रातें प्यारी, मुझे स्वप्न अपने दृग का !

दृग का दृग से प्यार नहीं यह,
जग का जग से प्यार नहीं यह,
मेरा तुमसे प्यार है !

तुमने भी देखा भविष्य को, मैंने भी आगे झांका,
तुमने अपना भाग्य टटोला, मैंने अपना बल आंका !
तुम्हें सोच अपनी मंजिल का, मुझे ध्यान अपने पथ का,
तुम सवार सासों पर, मैं भी प्रभु हूं प्राणों के रथ का !

रथ का रथ से प्यार नहीं यह,
पथ का पथ से प्यार नही यह,
मेरा तुमसे प्यार है !

×

तुम मुझको प्रिय मैं तुमको प्रिय, क्योंकि हमारी एक लगन,
अपने पंखों की उड़ान को मिलता हमको एक गगन !
कंठ तुम्हारा, धुन मेरी है, अधर तुम्हारे स्वर मेरे,
चरण तुम्हारे, गति मेरी है, दान तुम्हारे, वर मेरे !

वर का वर से प्यार नहीं यह,
स्वर का स्वर से प्यार नही यह,
मेरा तुमसे प्यार है !

जहां रूप है, प्रीति है

तुम्हें चूम कर चांद की ओर देखा,
हटानी पड़ीं फिर निगाहें गगन से !

भ्रमर ने कहा कान में गुनगुना कर,
हृदय हूं तुम्हारा कमल का नहीं हूं !
कली यों नयन में नयन डाल बोली
तुम्हारे अधर चूम कर जी रही हूं !

तुम्हें बाहुओं में लिये हूं अभी मैं,
करे कौन बातें भ्रमर से, सुमन से ?
तुम्हें चूम कर चांद की ओर देखा,
हटानी पड़ीं फिर निगाहें गगन से !

किसी ने कहा, प्रीति चंचल उषा है,
लजीली, नहीं मन-गगन में रुकेगी !
किसी ने कहा प्रीति तीखी कंटीली,
हृदय वेध देगी, नहीं यह झुकेगी !

तुम्हें पा चुका हूं, स्वयं खो गया हूं,
कहूं क्या क्षणिक से, डरूं क्यों चुभन से ?
तुम्हें चूम कर चांद की ओर देखा,
हटानी पड़ीं फिर निगाहें गगन से !

×

हृदय चीर कर रूप मन में भरा है,
निवासी किसी के जगत का नहीं हूं !
हृदय को चुराता, हृदय को लुटाता,
जहां रूप है, प्रीति है, मैं वहीं हूं !

न चातक गगन का, न वंदी कमल का,
लगा हूं नहीं मैं, किसी की लगन से !
तुम्हें चूम कर चांद की ओर देखा,
हटानी पड़ीं फिर निगाहें गगन से !

न थकतीं दिशाएं

कि, तुम साथ होगे किसी दिन डगर पर,
इसी आसरे पर चला जा रहा हूं !

न थकती दिशाएं, न चूकती निशाएं,
मगर बीतती जा रही आस मन की !
मिले दो अधर राह में मुसकुराते,
मिलीं चार बूंदें सताये नयन की !

कि तुम प्राण के दीप को स्नेह दोगे,
इसी आस पर मैं जला जा रहा हूं !
कि, तुम साथ होगे किसी दिन डगर पर,
इसी आसरे पर चला जा रहा हूं !

क्षितिज कह रहा है, तनिक पास आओ,
कि पग थाम लेते मगर शूल मग में !
बढ़ाती रही जल दिखा कर जलन ही,
खिली रेत पर भी सजल आस दृग में !

कि मैं हर कदम पर नयी सांस लेता,
मगर हर कदम पर छला जा रहा हूं !
कि तुम साथ होंगे किसी दिन डगर पर,
इसी आसरे पर चला जा रहा हूं !

×

छला हूं, जला हूं, चला किन्तु आगे,
गरल से बुझी, पर बुझी प्यास मेरी !
कसम जिन्दगी की, कि मैं खा चुका हूं,
तड़प कर उठी, पर उठी सांस मेरी !

कभी चांद बन, रात उजली करोगे,
कि मैं सांझ बन कर ढला जा रहा हूं !
कि तुम साथ होगे किसी दिन डगर पर,
इसी आसरे पर चला जा रहा हूं !



उड़ने वालो क्या धरती पर

वे अरमान, जिन्हें प्राणों ने रक्त पिला कर पाला !

धरती से हम देख रहे हैं, नभ में उलझे तारे,
तारे देख रहे जीवन में उलझे पांव हमारे !
जलधि ज्वार के हाथ उठाता, पर सरिता कब मानी ?
कागज की नौका, दीपों की, हुई न कब कुर्बानी !
भभक उठी अपने श्वासों से अपने उर की ज्वाला !
वे अरमान, जिन्हें प्राणों ने रक्त पिला कर पाला !



स्नेह वर्तिका से कहता है, भोली, जल जाओगी,
हाला को अंगूर जताते, विषमय कहलाओगी !
पलक चूमते है जिस निधि को, अश्रु वही से आते,
तृप्ति कहां चुम्बन प्राणों में प्रलय मचा सा जाते !
क्षण का मिलन, विरह युग युग का हुआ प्यार का प्याला !
वे अरमान, जिन्हें प्राणों ने रक्त पिला कर पाला !

हास, अरे, तिरछी रेखा बन कर आता अधरों पर,
गीत, अरे, जीवन के मधु को खींच पा रहा रस-स्वर !
प्राणों का सचित सौरभ श्वासों में उड़ खो जाता !
सीमा में बंदी मानव-स्वर गूंज गूंज टकराता !
चिता बन चली देखो मेरे सपनों की मधुशाला !
वे अरमान, जिन्हें प्राणो ने रक्त पिला कर पाला !

उड़ने वालो, क्या धरती पर पीड़ा बहुत घनी है ?
जो तुमने छोड़ी नीडो वाली अपनी अवनी है,
रंग बिरंगी मछली क्यों डूबी अपने पानी में,
क्या हम इतने बुरे हो गये अपनी नादानी में ?
सुई न छेदो इन सुमनों में, मुरझायेगी माला !
वे अरमान, जिन्हे प्राणो ने रक्त पिला कर पाला !

सरगम घुंघराली या परियों की अलकें

बन गये हजारों गीत, कि तुम मुसकाये !

आ गयी लहर में लोच, लोच में सरगम,
सरगम घुंघराली, या परियों की अलके !
बंध गयी आज जैसे बाहों में चितवन,
तारों पर लेटी चांद चूमती पलकें !
शबनम रानी ने हरसिंगार बिखराये !
बन .ये हजारों गीत, कि तुम मुसकाये !

अब मलय छोड़ता नहीं किरण का आंचल,
आंचल में दूध उनींदा सा जगता है!
लो, देख लिये मेरे सपने भी तुमने,
अब तो जीना पागलपन सा लगता है!
मन करता, अब न किसी से आंख लड़ाये!
बन गये हजारों गीत, कि तुम मुसकाये!

तुम सत्य नहीं, आभास भी नहीं, लेकिन,
मैं दो क्षण कभी न अब तक रहा अकेला!
ये श्वास, कि तुमने दिये, लिये बस मैंने,
कोई जीता हो, मैंने जीवन खेला!
जैसे कोई गुड़ियों को खेल खिलाये!
बन गये हजारों गीत, कि तुम मुसकाये!



उड़ते हैं लेकिन पड़े छांह के लाले

गीतों के पंछी लौटे पंख पसारे !

हो गयी सांझ या छोटा हुआ गगन है,
छोटा है नीड़ उधर, पर बड़ी ल न है !
कामना-प्रात संग गीत उड़े कोसों तक,
ले डूबो सांझ किरण के मस्त इशारे !
गीतों के पंछी लौटे पंख पसारे !

सारी दुनियां से ऊपर उड़ने वाले,
उड़ते हैं, लेकिन पड़े छाँह के लाले!
सपनों के महल खड़े सच की सिकता पर
जीवन दूभर करते आदर्श हमारे!
गीतो के पंछी लौटे पंख पसारे!

गीतों के पंछी, बहुत दूर जाना है,
ऊंचे प्रकाश को धरती पर लाना है!
है अभी सांझ, कल होगी भोर सुहानी,
इसलिये आज न्योछावर है दुःख सारे!
गीतों के पंछी लौटे पंख पसारे!

उठ रहे रूप के ज्वार

वह जाने दो मुझ को जीवन की धारा में
धारा रुक न सकेगी मेरी एक लहर !

यौवन के पोत भटकते खोकर दिशा ज्ञान,
उठ रहे रूप के ज्वार, तीर से टकराते !
उड़ रहे प्रीत के पंछी, जग के नीड़ छोड़,
मंझधार भटकते हुए पोत पर मंडराते !
यदि रोक सको तो रोको घुमड़ी हुई घटा,
रिमझिम में चुप न रहेगी मेरी एक छहर !

तारों की सरगम में खोये सपनों के स्वर,
छुप गया दोज का चाँद नींद की बदली में!
जाने कैसी नीरवता छायी प्राणों पर,
वीणा में लय न रही, या मेरी अंगुली में?
परिमल बन कर उड़ता है जीवन का पराग
कैसे बंध कर रह जाये मेरी एक फहर

कोई हंस देता, और कहीं खिलते प्रसून,
कोई गाता है, गूंज रही है हरियाली!
पायल बजती, थिरकन है तुतले अधरों पर,
है चित्र लिखी दुलहिन सी धरती मतवाली!
प्राणों की है करताल, श्वास की मुरली है,
गति की शहनाई और मांगती एक पहर,।
बह जाने दो मुझ को जीवन की धारा मे,
धारा में रुक न सकेगी, मेरी एक लहर!



एक चित्र

करवट पर क्या टिकी रहेगी ?

सोयी है प्राणों की रानी !
अस्त व्यस्त केशों के नीचे मुंदे पलक, वंदी है वाणो !

बांयी करवट पर ढुलका तन, कटि पर है आ मुड़ी कलाई,
साड़ी में नवनीत देह का रख न सकी पहली अंगड़ाई !
सिहर सिहर उठती जंघाएं निज मांसल गुदगुदे स्पर्श से,
निद्रा की यह शिथिल यवनिका तन मे भरती तृप्ति सुहानी !
सोई है प्राणों की रानी !

मोती की छाया सी स्मिति में छलक पड़े वे स्वप्न सुहाने,
चंचल आंचल में उठ आये यौवन के अनुमान अजाने!
आंचल क्या, सम्पूर्ण देह अब मादकता में झूम उठी, लो,
करवट पर क्या टिकी रहेगी, यह गदरायी उष्ण जवानी?
सोयी है प्राणों की रानी!

अस्त व्यस्त केशों के नीचे मुंदे पलक, बंदी है वाणी,
निद्रा की यह शिथिल यवनिका तन में भरती तृप्ति सुहानी,
करवट पर क्या टिकी रहेगी, यह गदरायी उष्ण जवानी!
सोयी है प्राणों की रानी!



हैं तो बहुत किन्तु

कि, हैं तो बहुत किन्तु मेरे लिए तो,
तुम्हीं हो, तुम्ही हो, तुम्हीं हो, तुम्ही हो !

कि तुम मे यही तो कमी है कि सबको,
चले हो लुटाते हुए रूप-प्याली !
सभी की निगाहें रहीं तृप्त होतीं,
मगर रह सका मैं अधिक भाग्यशाली !
जहा तक बढ़ा दायरा जिन्दगी का,
तुम्हीं आसमा हो, तुम्ही वह जमीं हो !
तुम्हीं हो, तुम्हीं हो !

इसे देय मानूं, रहूंगा कहां मैं ?
तुम्हारे बिना जिन्दगी क्या करेगी ?
किसी की गरम सांस से मैं जलूं क्यों ?
कि मेरी जलन से न दुनियां डरेगी,
तुम्हारे लिए प्यार सब का जग तो,
जग क्यों मुझे तृप्ति इससे नहीं हो !
तुम्हीं हो, तुम्ही हो !

कि मैं एक हूं, एक ही जिन्दगी है,
कि मेरे लिये एक तन मन वहुत है !
मुझे एक ही वस मिला प्यार तुम से.
कि मेरे लिये तो यही धन वहुत है !
कई प्यार ओढ़े, तुम्हें क्या कहूं, वस,
कई वार लौटी हुई जिन्दगी हो।
कि हैं तो वहुत, किन्तु मेरे लिये तो,
तुम्हीं हो, तुम्हीं हो, तुम्ही हो, तुम्हीं हो।



यौवन की तपती वसुधा पर

प्राण मांगते प्यार,
प्राणे, प्राण मांगते प्यार !

चपल अंगुलियों के स्पंदन से,
आहत रन्ध्रों के कंदन से,
कूक उठी वंशी विह्वल हो, प्राण मांगते प्यार !
प्राणे, प्राण मांगते प्यार !

तेरे मृदुल मृदुल दो पदतल,
अनगिन हो हो उठते प्रति पल
प्राणों का संगीत बन गयी, पायल की झंकार।
नृत्यिनि, पायल की झंकार।

यौवन की तपती वसुधा पर,
मन के चातक की विपदा पर,
लौट गयी हा, घटा रूप की, विफल हुई मनुहार।
मन की विफल हुई मनुहार।

आज सुरति मधुवेला में,
अरमानों की उद्वेला में,
पुलकित अंगड़ाई से छूटा लतिका का आधार।
आश्रित लतिका का आधार।
प्राण माँगते प्यार, प्राणे, प्राण माँगते प्यार।



नभ ने वसुधा पर कान लगाया

मेरे गीतों को सुनने के लिये धरा ने
दूर कहीं से नभ को अपने पास बुलाया !

मचल मचल कर आँसू मुझ से बोले, गाओ,
धूल भरी कलियाँ भी कहतीं, गीत सुनाओ !
चमकीले चूड़ी के टुकड़े भी सुनते थे,
मैंने गा गा कर इन सब को बहुत रुलाया !
मेरे गीतों को सुनने के लिये धरा ने
दूर कहीं से नभ को अपने पास बुलाया !

उजड़ तरु पर पंछी बैठा रहा अकेला,
गहरी हो होती थी उधर साँझ की वेला !
अधरों से चिनगारी फूटी, जुगनू उड़ते,
काली होती वल्लरियों पर इन्हें झुलाया !
मेरे गीतों को सुनने के लिये धरा ने
दूर कहीं से नभ को अपने पास बुलाया !

नभ ने वसुधा पर था अपना कान लगाया,
तारों ने पलकों में आकर उसे जगाया !
मेरे मन का भेद सुना जग ने मूच्छित हो,
चांद डूबने को चल दिया कहीं अकुलाया !
मेरे गीतों को सुनने के लिये धरा ने
दूर कहीं से नभ को अपने पास बुलाया !



रो उठा तो शुरू हो गयी जिन्दगी

जानता था किसी को नहीं, इसलिए,
चांद से, फूल से बात होने लगी !

तन वदन एक चोला, मगर और भी
वस्त्र बनने लगे तन बदन के लिये !
रो उठा, तो शुरू हो गयी जिन्दगी,
जो मुनहसर किसी पर कफन के लिये !
चेहरे हैं कई, और चश्मे कई,
खेल की फिर शुरूआत होने लगी !
चांद से, फूल से बात होने लगी !

आंख लड़ती उधर, जान लड़ती इधर,
स्वप्न है उस तरफ, सत्य है इस तरफ !
सांस बन कर उठी प्यार की गंध तो,
आह बन कर गिरे जिन्दगी के हरफ !
हर सवेरा बिता कर हुई दोपहर,
शाम ढलने लगी, रात होने लगी !
चांद से, फूल से बात होने लगी !

आदमी लग रहा आज तो अजनबी,
आज मैं भी न शायद बदलने लगूं !
हार कानून से मान लूं, या कि मैं,
रस्म की हर कवायद बदलने लगूं !
इस जमीं पर लगा मन नहीं इसलिए,
आसमां से मुलाकात होने लगी !
जानता था किसी को नहीं इसलिए,
चांद से, फूल से बात होने लगी !



आँचल में जो उठ उठ आयेंगे

सपनों के मेहमान, तुम्हें पलकों से नहीं निकलने दूंगा।

तुम्हें नींद की रातों में लज्जा सुहाग की दिये चलूंगा,
तुम्हें प्यार की बातों में सब रंग फाग के दिये चलूंगा।
मेरे मन के गान, तुम्हें अधरों पर नहीं बिछलने दूंगा।
सपनों के मेहमान तुम्हें पलकों से नहीं निकलने दूंगा।

तारों पर चाँदनी तुम्हें तानें सुनायेगी, चांद मिलेगा,
श्वासों की मालाओं के, प्रति सुमन सुमन का गात खिलेगा।
चुम्बन की रजनी गंधा का सौरभ नहीं मचलने दूंगा।
सपनों के मेहमान, तुम्हें पलकों से नहीं निकलने दूंगा।

आंचल में जो उठ उठ जायेंगे, मेरे अरमान बनेंगे,
स्मिति में सिहर सिहर जो जायेंगे, मेरे अरमान बनेंगे।
तुम्हें बाहुओ में भर कर, मैं करवट नहीं बदलने दूंगा !
सपनों के मेहमान, तुम्हें पलकों से नहीं निकलने दूंगा।



कि जैसे सोचता कुछ चाँद

अब सोने न देती रात !

झलकती ओस तारों पर,
कि करती चाँदनी कुछ याद !
गगन पर शिथिल सा स्पंदन,
कि जैसे सोचता कुछ चांद !

अरे धरती गगन चुपचाप करते हैं क्षितिज पर बात !
अब सोने न देती रात !

सिसकती कामनाएँ और
मेरी चेतना सुधि–सिक्त !
कि, आहों में न उठता वक्ष
इतना व्यस्त मेरा चित्त !
अरे, यह प्रीत का संगम, अनेकों हो रहे उत्पात !
अब सोने न देती रात !

कहीं जलता न कोई दीप
जैसे स्वप्न है संसार !
न चुम्बन पा रही कलिका
न अलि करता कहीं अभिसार !
न दुलहन ही समेटे लाज, शलभों की न अब बारात !
अब सोने न देती रात !



है मँझधार बाहुओं के तट में

रात रात भर जगना बात बुरी है पर,
नींद चुरा कर तुम न मुझे सोने देते !

अच्छी बात नहीं, मत आओ शैया पर,
मत बैठो मेरी पलकों की नैया पर !
वरना, है मंझधार बाहुओं के तट में.
अगम सिंधु है, मेरी काया के घट में !
मुझे न हंसने दो, पर ठहरो तुम भी तो,
हंसते, हंस कर तुम न मुझे रोने देते !
नींद चुरा कर तुम न मुझे सोने देते ।

सोने ता दा सपनों में आजाना फिर,
फिर प्राणों पर, जीवन पर छा जाना फिर,
जगता हूं, तो याद यहां रहती जगती,
यों जगती यह तो मुझ को रहती ठगती!
प्यार करो, या समझदार ही रहने दो,
पागल भी तो तुम न मुझे होने देते!
नींद चुरा कर तुम न मुझे सोने देते!

ओ जादूगर, खुली हुई मेरी पलकें,
अरे रुको, उलझाओ मत इनमें अलकें!
बोल उठूंगा अभी, जमाना हंस देगा,
ऐसी बात न समझो, और न समझेगा।
कहलाऊंगा सूने में गाने वाला,
गाते मुझ में तुम न मुझे खोने देते
रात रात भर जगना बात बुरी है पर,
नींद चुरा कर तुम न मुझे सोने देते!



खुली सीप हो चातक के अरमान भी

गीतों के हो गात, कि हैं मन प्राण भी !

विना तुम्हारे, गीत न मेरे दिख पाते,
सांझ कमल की, मेरे मन पर लिख जाते !
तुम हो मेरे गीत, कि दुनियां देखती,
तुम जग की चितवन हो, है वरदान भी !
गीतों के हो गात, कि हैं मन-प्राण भी !

तुम्हीं कृष्ण की मुरली मेरे अधरों पर,
स्वर के विहग तुम्हीं, मंडराते रन्ध्रों पर!
मुग्ध राधिका सी, रागिनियां झूमती
यमुना के पनघट हो, दुबके कान्हे भी!
गीतों के हो गात, कि है मन प्राण भी!

तुम किसलय हो, तुम ऊषा के कलरव हो,
मुंदी हुई पलकों के खुलते पल्लव हो।
तुम अषाढ़ के पहले पहले बादल हो,
खुली सीप हो, चातक के अरमान भी!
गीतों के हो गात, कि हैं मन प्राण भी!



तुमने तारों को सपनों की रिश्वत दे

तुमने तारों को सपनों की रिश्वत दे
भरी नींद से आकर मुझे जगाया है!

मैंने पलकों की पालकी सजायी थी,
मैंने श्वासों की करताल बजायी थी!
मस्ती के कहार दो पल दम साध रहे,
तन के घर, निंदिया को विदा कराया है!
तुमने तारों को सपनों की रिश्वत दे,
भरी नींद से आकर मुझे जगाया है!

तुम उजाड़ मत करो सेज के स्वर्गों को,
आदर्शों को पुण्य पाप के वर्गों को!
अपने माटी के दीपक से देखा जो,
मैंने आंगन का दर्शन अपनाया है!
तुमने तारों को सपनों की रिश्वत दे,
भरी नींद से आकर मुझे जगाया है!

मेरी कुटिया के बाहर तुम चमक उठीं,
सौगंधों की गंध लिये तुम गमक उठीं!
पल भर का आवेश प्राण का बंधन था,
तन मन को तुमने आजाद कराया है!
तुमने तारों को सपनों की रिश्वत दे,
भरी नींद से आकर मुझे जगाया है!



प्रीति में रीति नहीं घोली जाती

आ सकता हूं मैं दुनियां को लांघ कर,
लेकिन मन की लाज नहीं खोली जाती!

मुस्कानों की भाषा को पहचान लिया,
आंखों के संकेतों को है जान लिया!
अपने मन को पढ़ डाला है पुस्तक सा,
और उमड़ती मनुहारों को मान लिया!

गा सकता हूं मैं गीतों में प्रीति को,
लेकिन दिल की बात नहीं बोली जाती!
लेकिन मन की लाज नहीं खोली जाती!

तुमने जितने साँस रोक कर छोड़े हैं,
अरमानों के पोत कि जितने मोड़े हैं !
मैंने भी तारों की मालायें गूंथी,
जितने देखे सपने उतने थोड़े हैं !

पलक तुला पर सारी दुनियां झूली है,
लेकिन उर की कसक नहीं तोली जाती !
लेकिन मन की लाज नहीं खोली जाती !

दुनिया को भूला हूं, अपने को भूला,
लगन-कुसुम मन के उपवन में तव फूला !
धरती से दी एड़ गगन तक पहुंचाया,
मैंने जीवन के संकल्पों का झूला !

कंटक, पत्थर को पांवों ने रंग डाला,
किन्तु प्रीति में रीति नहीं घोली जाती !
आ सकता हूं मैं दुनियां को लांघ कर
लेकिन मन की लाज नहीं खोली जाती !



मिट्टी गाने लगी मल्हार

फिर आये कजरारे बादल, फिर आयी बरसात !

फिर रूठा चन्द्रमा पोंछ कर चन्द्रकिनि का भाल,
गिर कर औंधा हुआ चांदनी की आरति का थाल !
लो, सुहाग की इस समाधि से होता अश्रु-निपात !
फिर आये कजरारे बादल, फिर आयी बरसात !

यह लो खिली फूल सी मिट्टी गाने लगी मल्हार,
रिमझिम रिमझिम लगी नाचने, पगली हुई फुहार !
हंसती, इतराती यह बिजली करती है उत्पात !
फिर आये कजरारे बादल, फिर आयी बरसात !

चिपक गई भींगी चोली, उभरे उरोज दो गोल,
यहां अकेला पाकर हंस दी, ग्राम-युवति दिल खोल,
अब के पीहर ले जायगी राई की सौगात !
फिर आये कजरारे बादल, फिर आयी बरसात !



अंकुर के स्वप्न सिकता के कण में

घुमड़ रहे हैं मेघ, कि मिट्टी माँ बनती,
फहर फहर उड़ता अंचल कि बयार का !

अंकुर के हैं स्वप्न कि सिकता के कण में,
किसलय के अरमान कि पत्थर के मन में !

खुले हुए चातक के प्यासे कंठ में
झूम झूम झोंका आता कि मल्हार का !
फहर फहर उड़ता अंचल कि बयार का !

खुली घटा की गांठ कि बिखरी लो, मणियां,
धानों की नौलखी वालियों की लड़ियाँ!
कल धरती की गोद मिलेगी हरी भरी,
दूध छलक आयेगा उर के प्यार का!
फहर फहर उड़ता अंचल कि बयार का!

परसों धान पकेंगे सब के खेत में,
और नाज के कण निकलेंगे रेत में,
सूर्य, स्वर्ण, चंदा चांदी बिखरायेगा,
जीवन प्यार संजोयेगा संसार का!
घुमड़ रहे हैं मेघ, कि मिट्टी माँ बनती,
फहर फहर उड़ता अंचल कि बयार का!



मदिरा से कह दूंगा मैं प्यास नहीं है

अधरों से जब अधरों की बातें होंगी !

लूटूंगा मोती मैं कंगाल गगन के,
लाऊंगा आंसूं हंसते हुए सुमन के !
प्राणों को इनके साथ तुम्हें दे दूंगा,
शतदल के दिन, दुलहिन की रातें होंगी !
अधरों से जब अधरों की बातें होगी !

मदिरा से कह दूंगा, मैं, प्यास नहीं है,
अमृत से कह दूंगा, विश्वास नहीं है!
मैं अपना अहं क्रुद्ध जग को दे दूंगा,
मन में स्मिति, आंखों में बरसातें होंगी,
अधरों से जब अधरों की बातें होंगी!

प्राणों के पंछी गाते पंख पसारे,
गूंजे जग-तरु पर जीवन-नीड़ हमारे!
मन प्राण, हृदय, जीवन सब मैं दे दूंगा,
गाती खुशियां मेरी सौगातें होंगी!
अधरों से जब अधरों की बातें होंगी!

जीवन से जग को तृप्ति नहीं होती है,
मेरे मरने पर यह दुनियां रोती है!
पर जीवन मरण हुए कब मेरे बोलो?
कब मेरी अर्थी और बरातें होंगी!
अधरों से जब अधरों की बातें होंगी।



साधना कुटी की देहरी से कुछ दूर

यह प्राणों का फूल, तुम्हारी वेणी का शृंगार !

मेरी चितवन बने भारती के दीपक की जोत,
यह मेरी मनुहार उड़े बन कर संदेश-कपोत !
उड़ें, तुम्हारे मुख-सरसिज को अधर-पँखुरियां खोल,
मेरे अनगाये गीतों के अलियों की गुंजार !
यह प्राणों का फूल, तुम्हारी वेणी का शृंगार !

तुम सपनों की सोनजुही की कलियाँ चुनते कौन ?
खुले दृगों पर अंगुलियों के घूंघट बुनते मौन !
मेरी खोई ममता की पायल, पगतल से खोल,
मस्तक मे रख चले चेतना के सुलग अंगार !
यह प्राणों का फूल, तुम्हारी वेणी का शृंगार !

तुम, मेरे कल्पना-व्योम के सुर-धनुपी वह छोर,
छोड नीड़ का वक्ष उड़े कामना-विहग जिस ओर !
तुम मेरी साधना-कुटी की देहरी से कुछ दूर,
छलना के कुंजो में खिलते सुरभित हर सिंगार !
यह प्राणों का फूल तुम्हारी वेणी का शृंगार !



आसमान से झरते सरगम

यह गीतों की रात है !

मचल रहा है कंठ, बरसता है बादल
सघन घटा है और कामनाएं पागल !
रह रह कर मन में उठ आती एक प्रणय की बात है !
यह गीतों की रात है !

ऊपर सूखी, नीचे गीली है धरती
और गर्भ में फसलों के अंकुर भरती !
खिली खेत में, पली गगन में जीवन की बरसात है !
यह गीतों की रात है !

हरियाली के गीत पपीहे गाते हैं,
आसमान से सरगम झरते आते हैं !
गर्जन देता ताल और रिमझिम करती उत्पात है !
यह गीतों की रात है !



जिसे देखने के लिए अश्रु आये

अभी तक नहीं जान पाया किसी को !

जिसे चुम्बनों में नहीं चूम पाया
न आलिंगनों में हृदय में समाया
न अपना अभी मान पाया किसी को
अभी तक नहीं जान पाया किसी को !

जिसे देखने के लिये अश्रु आये
जिसे आह का मौन इंगित बुलाये
कहाँ बाँध अरमान पाया किसी को
अभी तक नहीं जान पाया किसी को !

कि जिस तृप्ति की प्यास से कंठ भरता
कि जिस प्यार की आस यौवन उभरता
न इसका अभी ध्यान आया किसी को !
अभी तक नहीं जान पाया किसी को !



आह है अशेष शेष हो चुका प्रहार

तुम चले गये, कि प्राण हो गये उदास,
हो गये उदास !

हम मिले, कि मिल गये चांद औ चकोर
दब गयी उठी हुई कामना-हिलोर !
हम मिले, कि मिल गये दीप और स्नेह
हो गये असीम, एक प्राण और देह !
तुम चले गये, कि दीप का गया प्रकाश !
तुम चले गये, कि प्राण हो गये उदास !
हो गये उदास !

तुम गये, कि गीत में स्वर नहीं रहा
रिक्त हृदय अश्रु से भर नही रहा!
तुम गये कि विश्व भी रूठ सा गया
श्वास का सहाय, हाय, छूट सा गया!
फूल हुए म्लान, गये रूप औ सुवास!
तुम चले गये, कि प्राण हो गये उदास!
हो गये उदास!

याद ही रही यहां तुम नहीं रहे,
पद गये, कि शेष ये चिन्ह ही रहे!
आह है अशेष, शेष हो चुका प्रहार,
मिलन था क्षणिक, अनंत औ अपार प्यार!
शोक रह गया, रहे न अश्रु और हास!
तुम चले गये, कि प्राण हो गये उदास!
हो गये उदास!



विदा की वेला में

अरे, विदा की वेला में हम मुसकाये थे !

प्राण विछुड़ने से वैसे तो सजल हुए थे
जीवन के पग दो पल को तो अचल हुए थे
किन्तु मिल गये नयन घूम कर कुछ कहते से
स्मिति के अवगुंठन में अधर पीर सहते से
मुरझाने के पूर्व सुमन कुछ खिल पाये थे !
अरे, विदा की वेला में हम मुसकाये थे !

मूक हो गये, कह न सके मिलने की बातें
आंखों से भी झर न सकी मधु की बरसातें
आज वही उमड़ी पड़ती है मन की भाषा
वही हृदय में पलती है आंसू की आशा!
आज यही संतोष मुझे है, तुम आये थे!
अरे, विदा की वेला में हम मुसकाये थे!

प्यार मिलन में मिलता, और विरह में पलता
और याद में खिलता है आशा में ढलता
अवनी-अम्बर का अन्तर जब क्षितिज पा रहा
यह देहों का अन्तर क्यों उन्माद ला रहा?
दग्ध-कंठ कोकिल ने रस-स्वर बरसाये थे!
अरे, विदा की वेला में हम मुसकाये थे!



स्मृति के ज्योतित मुख में मुख दे

हंसते मन के आसमान में अरमानों के चांद सितारे !

अंतर के दर्पण पर झुक कर सजतीं गीतों की सुन्दरियां,
स्मृति के ज्योतित मुख में मुख दे आयीं पुलकों की फुलझड़ियां !
यौवन–उत्सव में जीवन के रंगमंच पर प्रीति-नर्तकी,
स्मिति सी थिरक थिरक कर करती चलती जादू भरे इशारे!
हंसते मन के आसमान में अरमानों के चांद सितारे !

आसमान की आंखों के आंसू, धरती के दिल की ज्वाला,
ओह, हवा की आहों से जो छलक उठा सागर का प्याला,
इन्हें तुम्हारी देह और करुणा को निज जीवन समझे था,
एक प्रलय ले गई साथ में द्वैत तुम्हारे और हमारे!
हंसते मन के आसमान में अरमानों के चांद सितारे!

सुख सरिता पर जीवन—नौका की अनुभव—पतवार नाचती,
पतवारों पर भाव—लहरियों की लघु वंदनवार नाचती!
इधर उधर कामना-मछलियां विस्मय-कमलों से टकरा कर,
उठतीं, छुप जातीं, विचार की भंवरों में अपना मन मारे!
हंसते मन के आसमान में अरमानों के चांद सितारे!



जो व्यर्थ है अंक में भर रहे हो

मिला तो नहीं धूल का एक कण भी
मगर ला रहा हूं, गगन के सितारे !

कहो क्या खजाना छिपा है सितारो ?
कि जो आदमी को टिपा है सितारो
कि क्यों हमने ये फूल अंगार छोड़े
कि क्यों हमने ये अश्रु शृंगार छोड़े ?
कि अपनी कहूं क्या, कि किस दिल्लगी में
कुटीके लिए एक तिनका न जोड़ा
बनाये महल कल्पना के सहारे !
मगर ला रहा हूं गगन के सितारे !

कि अंतर कहो जानवर आदमी का
चलूं चांद तक, या बता दो कमी क्या ?
कि तुम शून्य में साधना कर रहे हो
कि जो व्यर्थ है, अंक में भर रहे हो !
जमाने से यों बात होती है मेरी
लहर में, भंवर में, कि मैं चल रहा हूं
कि तुम चल रहे हो किनारे किनारे !
मगर ला रहा हूं गगन के सितारे !

हवा बंद कर दे, जलधि को सुखा दे
कि ब्रह्मांड की आत्मा जो दुखा दे
कि जो सेतु से बांध का काम लेता
उसे यह जगत आदमी नाम देता !
कि कुछ आज ऐसा समां बंध रहा है
कि या आदमी पेड़ पर ले बसेरा
कि चश्मे उतारे, कि चेहरे उतारे !
मिला तो नहीं धूल का एक कण भी,
मगर ला रहा हूं गगन के सितारे !



पिया स्वाति की एक बूंद सा

पल भर सुख देने वाले तुम, जियो हजारों साल !

मन की अमराई में लाये पहली पहल बहार
और प्रीति की कलिका की पंखुरियां खिलीं हजार
प्राण कुंज में यौवन छेड़ रहा है पुलक-सितार
उर-मुरली भी बजी कि बजने लगी श्वास करताल !
पल भर सुख देने वाले तुम, जियो हजारों साल !

रोम रोम पर नाचो, खेलो अरमानों से खेल
हो पाये, या नहीं कभी चाहे देहों का मेल
और विरह की सिकता पर भी बढ़े प्रणय की बेल
स्मृतियों के मेहमान, तुम्हारी होगी नहीं, मिसाल !
पल भर सुख देने वाले तुम, जियो हजारों साल !

पल की लघु गागर में उमड़ा सुख का सिंधु अपार
पिया स्वाति की एक बूंद सा, जिसे एक ही बार
गीतों का चातक न सहेगा सतत तृप्ति का भार
बूंद बूंद से प्यास बनेगी मुक्ताओं की माल !
पल भर सुख देने वाले तुम, जियो हजारों साल !



अभी प्राण कंगाल मेरे

कहूं क्या, समझ लो कि क्या कह रहा हूं!

न बांधो मुझे स्वप्न के बंधनों में,
अगर बंध गया, सौत दुनिया जलेगी!
जलेगी, इसे प्यार भाता नहीं जो
स्वयं को छला है, हमें भी छलेगी!
न बांधो, प्रणय की मधुर बाहुओं में,
कहूं क्या, समझ लो कि क्या सह रहा हूं!
कहूं क्या, समझ लो कि क्या कह रहा हूं!

न मांगो अभी प्यार के बोल मुझसे,
विवश हूं अभी मैं, विवश प्यार भी है!
विवश है अभी मुक्ति भी बंधनों में,
स्वयं की विजय में छिपी हार भी है!

न मांगो अभी प्राण कंगाल मेरे
कहूं क्या, समझ लो कहां रह रहा हूं!
कहूं क्या, समझ लो कि क्या कह रहा हूं!



उर्वशी की पायलों में प्राण

एक मीठी याद घुलती आ रही मन में !

स्वप्न की नौका, कि जैसे छोड़ कर पतवार-
मौन मंथर बढ़ रही हो, झाकती उस पार !
चांदनी मुसका उठी हो पुलक सी तन में !
एक मीठी याद घुलती आ रही मन में !

कंठ में जैसे कि मचली हो सलोनी तान,
उर्वशी की पायलों में जग रहे हों प्राण !
विहंसती सी आ रही मुसकान जीवन में !
एक मीठी याद घुलती आ रही मन में !

गुदगुदा कर चांद को आयी मिलन की आस,
मधु-सरणि में डूब कर आयी मिलन की प्यास !
स्वप्न बंधते स्वप्न के सुकुमार बंधन में !
एक मीठी याद चुनती आ रही मन में !



जली राख से बँधी हुई चिनगारी

फूलों में उलझे तारो, तारों में उलझे फूलो !

:·

रे मन का क्षितिज छीनता आसमान से धरती
री सांस वक्ष में जग के अग्नि और जल भरती
रे चिता के अंगारो, गीतों से प्रीत करो मत
ोको मत निर्झर की गति, मेरी पलकों के कूलो !
लों में उलझे तारो, तारों में उलझे फूलो !

जब जीवन का विष प्राणों में पुलक जगाता आया
चितवन जिस पर हंसी, सदा उससे तो हृदय लजाया
मधुवन के सौरभ, मेरे अन्तर से दूर रहो तुम
पथ पर बिछ पदतल तक आओ, रज में बिखरे शूलो!
फूलों में उलझे तारों, तारो में उलझे फूलो!

जली राख से बंधी युगों से अपने में चिनगारी
बिलख बिलख कर मिल पाती है शैशव को किलकारी
यह प्रस्तुत क्षण भी मेरी स्मृति से अतीत होगा ही
तड़प चुका हूं तुमसे, जीवन की आगामी भूलो!
फूलों में उलझे तारों, तारो में उलझे फूलो!



प्रणय-रेखा से मिले दो विन्दु

आंख की बातें हृदय में पल रही हैं !

चार आँखें प्यार करती थीं परस्पर
पुतलियां विश्वास भरती थीं परस्पर,
दूर से विनिमय हुआ था चुम्बनों का,
आंख से परिचय हुआ था दो मनों का !
आंख की बातें हृदय में पल रही हैं !

नयन जब मिलते, अधर हिलते नहीं है
याद आती है, अगर मिलते नहीं हैं
आग भी है, और पानी भी हृदय में
हास भी विश्वास भी, मेरे प्रणय में !

स्वप्न मय रातें प्रणय में ढल रही हैं !
आंख की बातें हृदय में पल रही है !

प्रणय-रेखा से मिले दो बिन्दु हैं हम
प्रणय के तन के विलग दो अंग है हम
एक होने के बहाने तो कई हैं
किन्तु हम तुम एक होते तो नहीं हैं !

मिलन सौगातें विरह में जल रही हैं !
आंख की बातें हृदय में पल रही हैं !



रूप समर्पण को आतुर था

मुक्त नयन वरदान दे गये !
मूक दृष्टि में प्यार ढाल कर ममता का अभिमान दे गये !

रूप समर्पण को आतुर था, स्नेह वल्लरी डोल उठी थी
मेरे नयनों के प्रश्नों से उनकी चितवन बोल उठी थी
मेरे प्राणों की तृष्णा को स्वप्न का उपहार मिल गया
चिर-आंदोलित हृदय-वृंत को आशा का मृदुभार मिल गया ।
मेरी प्रीति-याचना पर वे एक विवश अरमान दे गये !
मुक्त नयन वरदान दे गये !

मधुर-मिलन, स्मृतियाँ, फिर आँसू, फिर जीवन की मंद मंद गति
फिर भविष्य की राह अजानी, फिर ताने औ कलह द्वंद प्रति
इस दुनियादारी का रूपसि, दुनिया वाले मोल करेंगे,
प्राणों के विनिमय को हम तो प्राणों ही से तोल करेंगे!

अधरों पर शपथें जड़ कर वे चुम्बन का अनुमान दे गये!
मुक्त नयन वरदान दे गये!

उनके विरह-जलज में अब मैं बंदी अलि सा गुंजन देता,
उर की श्वास-साधना को अब हूं स्मृतियों का चुम्बन देता
अपने जीवन की कविता की पंक्ति पंक्ति में प्यार पिरोकर
पारस-स्पर्श प्राप्त कर मेरा तन अब उनकी एक धरोहर!
धन्य हुआ मेरा जीवन जो वे मुझको पहचान दे गये!

मूक दृष्टि में प्यार ढालकर ममता का अभिमान दे गये!
मुक्त नयन वरदान दे गये!



खुल गयी रत्न की गाँठ बिखर कर

चुम्बन के रेशमी लचीले तार न टूटे,
नयनों की नैया खाती जाये हिचकोले !

गाते हैं मन के नूपुर वे राग सुरीले
रोम चमकने लगे रात के आसमान में
चाँद थिरकने लगा, झूमने लगीं दिशाएं
वाह वाह हो उठी हर्ष की, आनबान में !
तुम आये, खुल गई रत्न की गांठ बिखरकर,
और प्रीत के घूंघट उघड़ गये बिना खोले !
चुम्बन के रेशमी लचीले तार न टूटे
नयनों की नैया खाती जाये हिचकोले !

बाहों में नवनीत देह का, मुझमें तुम हो
जैसे गंध पवन में, जैसे दर्पण में मुख
दुनियां सोयी, रजनी उलझ रही सपनों में
और कल्पना में कैसे आयेगा यह सुख?

मेरे उर की सीप स्वाति की एक बूंद पी,
पिये तृप्ति के सागर, और पड़ी अनबोले!
चुम्बन के रेशमी लचीले तार न टूटे,
नयनों की नैया खाती जाये हिचकोले!

चुम्बन के रेशमी लचीले तार न टूटे
नयनों की नैया खाती जाये हिचकोले—
ढुल ढुल कर भरती जाये यौवन की गागर
उठते जायें सांसों के डग हौले हौले!

साहस की मदिरा में डूबे पंख प्राण के,
जीवन अपने व्रण विवेक के विष से धोले!
चुम्बन के रेशमी लचीले तार न टूटे
नयनों की नैया खाती जाये हिचकोले!



किरणों की तान

पलकों का तुमको सलाम है, अधरों की मुसकान बने हो !

तुम दिल के हो पास, कि दिल हो पास तुम्हारे चला गया है ?
प्यार किया है तुम से, या यह प्यार तुम्हीं से छला गया है ?
गीतों में तुमको गाता हूं, तुम मन के अरमान बने हो !
पलकों का तुम को सलाम है, अधरों की मुसकान बने हो !

मैं गुनगुन की भांति, तुम्हारे चारों ओर उड़ा करता हूं
सौरभ से तुम ओझल चितवन से, मैं नयनों को भरता हूं
अंसू की वीणा पर, तुम किरणों की तान बने हो !
पलकों का तुमको सलाम है, अधरों की मुसकान बने हो !

मैं ऊषा के साथ, प्राण की गागर लाया हूं यमुना पर
तुम पनघट की मुरली से क्यों ढुलका देते मेरी गागर
आकुल मनुहारों पर अपनी हंसी दबा कर, मान बने हो !
पलकों का तुमको सलाम है, अधरों की मुसकान बने हो !



इन्द्र धनुष तोड़े हैं मनुहारों से

मेरी पलकें, तितली के पर, शतदल के दल
रूप-वात से हो उठते हैं चंचल पल-पल !

चितवन के चुम्बन-सौरभ की मदिरा से भर
तितली के आलिंगन के सपनों को लेकर
मधुवन की मधु ऋतु की प्रीति लिये बैठा हूं
देख रहा हूं जीवन, विरह, मिलन की हलचल !
मेरी पलकें, तितली के पर, शतदल के दल,
रूप-वात से हो उठते हैं चंचल पल-पल !

कितने इन्द्र धनुष तोड़े हैं मनुहारों से
कितने फूल भिगोये गोले अंगारों से
कितने रंग लगाये काँटों में पंखों के
पत्थर से टकरायी गीतों को मधु कलकल !
मेरी पलकें तितली के पर, शतदल के दल
रूप वात से हो उठते है चंचल पल-पल !

रूप देखता है चितवन को पलक-गली में,
सुरभि देखती है तितली को कली कली में,
शतदल दर्पण पर झुकता है सिमट लजा कर
प्रीति सदा जीवन को कर देती विशृंखल !
मेरी पलकें, तितली के पर, शतदल के दल,
रूप-वात से हो उठते हैं चंचल पल-पल !



क्या होगा विश्वास न कल का

साँझ हो गयी चलते चलते !

पाँवों में, प्राणों में हल्का हल्का दर्द उभर कर छलका
सोचा आज अगर है पीड़ा, क्या होगा विश्वास न कल का
रात अँधेरी जाने क्या क्या रंग दिखाये ढलते ढलते !
साँझ हो गयी चलते चलते !

थके हुए राही को सन्नाटे ने दिल के भेद बताये
परिचय की पहली सौगातें बन कर जुगनू उड़ते आये
नभ के पहले पहले दीपक राह बनाते जलते जलते !

साँझ हो गयी चलते चलते !

एक रोशनी बुझी गगन की, और दूसरी लगी चमकने
एक चाँद लाखों तारों की ज्योति-गंध फिर लगी गमकने
कोटि कोटि द्युतिवंत न बुझते, भोर कर गये गलते गलते !

साँझ हो गयी चलते चलते !

संकल्पों के भोले अंकुर सत्य बन गये पलते पलते !



पीड़ा के पारस पर अभिमान करूंगा

आंसू बहुत बटोरे, अब तो मैं गीतों का दान करूंगा !

लोट गई मेरे चरणों में, मन के दामन को उलझाया
मुझ को कलियों ने भरमाया, मुसकानों ने बहुत रिझाया
प्राणों के पहरे में भी तो, याद हंसी की टिक न सकेगी
इसीलिये मैं तो पीड़ा के पारस पर अभिमान करूंगा !
आंसू बहुत बटोरे, अब तो मैं गीतों का दान करूंगा !

राहों को शूलों से और सितम को सपनों से रंग डाला
मैंने अमृत घट ठुकरा कर चूमा नील गरल का प्याला
मन का हर मोती दुनिया की कुल दौलत से बहुत कीमती
मन के रतन लुटा कर भी मैं अपने को श्रीमान करूंगा!
आंसू बहुत बटोरे अब तो मैं गीतों का दान करूंगा!

हर दिलके शोले में दहक रहे सन्नाटे की जबान हूं
हर मासूम इरादे की आहों पर झुकता आसमान हूं
मैं धरती से साढ़े तीन हाथ ऊपर हूं इसीलिए तो
अपने अरमानों के ऊंचे स्वर्गों का सम्मान करूंगा!
आंसू बहुत बटोरे अब तो मैं गीतों का दान करूंगा!



स्वर्गंगा में पुण्य-स्नान कर काम

चूम चूम जाता है, मन को प्यार !

पुलकों की कलियाँ गा उठती गीत
भावों के भ्रमरों में जगती प्रीत
स्वर्गंगा में पुण्य-स्नान कर काम
जीवन को शिशु सा लेता पुचकार !
चूम चूम जाता है मन को प्यार !

सिहर सिहर उठते अंतर के तार !
मुसकाए सपने पलकों के पास
छवि का अंत:पुर सुहाग की रात
और रूप का हृदय उदार, उदार !
चूम चूम जाता है मन को प्यार !

अमृत के सीकर नयनों में डाल
सोम-पान से यौवन किया निहाल
अंगड़ाई से अपनी सीमा तोड़
अरमानों में पागल किया दुलार !
चूम चूम जाता है मन को प्यार !



तारावलियो तुम नयन मूंद लो आज

मिलन-लालसा रोम रोम में, आज करूं अभिसार !

आज कपोलों पर अंकित हों अधरों के अरमान
श्वासों में हों एक आज तो दो देहों के प्राण
आज गुंथें आजानु चरण, काली कवरी लहराय
वक्षस्थल पर बंधे उरोजों का पुलकित मृदुभार !
मिलन-लालसा रोम रोम में, आज करूं अभिसार !

सावन आज चांद से कह दो बादल में छिप जाय
बादल से कह दो, वर्षा के आंचल में छिप जाय
खद्योतो, तारावलियो, तुम नयन मूंद लो आज
धरा, गगन पर केवल मेरा उनका हो अधिकार !
मिलन-लालसा रोम रोम में, आज करूं अभिसार

फिर न प्रात हो इस निशीथ का, कह दे आज चकोर
फिर न सोत सो उषा रंगे तम की शैया के छोर
और विश्व को आंख मिचौनी में जीवन थक जाय
कण कण, क्षण क्षण से है मेरे मन की यह मनुहार !
मिलन-लालसा रोम रोम में, आज करूं अभिसार !



वह रूप–गर्विता देह कल्पना मेरी

मैंने जन जन के मन की बात चुरायी !

जो आंखों की पलकें तितली सी चंचल
जो अधरों की मुसकान सजाती शतदल
जो यौवन को बांधे रहता वक्षस्थल
जो प्राणों की धड़कन पर पड़ते पदतल !

वह रूप–गर्विता देह, कल्पना मेरी
मेरी कविता में लेती है अंगड़ाई !
मैंने जन जन के मन की बात चुरायी !

जो पिहू पिहू सुन नभ में छा जाती है
जो गुंजन बन कलिका पर मँडराती है
जो आँखों में हृदयों को उलझाती है
जो दुग्ध-धार शिशु मुख में बरसाती है !
वह प्रीति लजीली ललित साधना मेरी
मेरे गीतों में सोती है अलसायी !
मैंने जन जन के मन की बात चुरायी !

जो मिट्टी पर भी कर देते हैं उत्सव
जो सूखे विटपों पर ला देते पल्लव
जो गिरि-शिखरों में गुंजा देते कलरव
जो वृद्ध जगत को रखते नूतन, अभिनव !
वे जीवन के अंकुर हैं रचना मेरी
मेरे दर्शन की देते सदा दुहाई !
मैंने जन जन के मन की बात चुरायी !



रवि शशि के मस्तक नत करतीं

पड़ा वहीं रह गया हिमालय,
उमड़ बढ़ चलीं रस-सरिताएँ!

ताली बजा बजा कर लहरें
निकल पड़ी हैं सती, हतराती!
ऊंचे चांद सितारों के ये
कभी झुकाती, कभी झुलातीं!
आत्मा के मन प्राण गा उठे,
लगीं थिरकने लघु लतिकायें!
उमड़ बढ़ चलीं रस-सरिताएँ!

रवि शशि के मस्तक नत करता
धूप ग्रौर चांदनी हमारी
सुर धनु के दोनों छोरों की
धरती ही होती ग्रधिकारी !
उठा नीलिमा के घूंघट को
झाँक चुकीं मेरी कविताएँ।
उमड़ बढ़ चलीं रस-सरिताएँ।

नाव चली, फिर पार हो गयी
तट में बंधा रहा सागर तो
रिमझिम बरसा जल बादल का
रीती हुई घटा-गागर तो !
जीवन की छाया पाने को,
उभरे, जलीं मजार, चिताएं,
पड़ा वहीं रह गया हिमालय,
उमड़ बढ़ चलीं रस-सरिताएँ !



मटमैली धरती है क्षितिज नहीं है

कह जो नहीं सका जग से, वह तारों से कहता हूं !

जग से मैं बातें करता हूं, तारों से कविताएँ
जीवित जग में मृत आशाएँ, कैसे अवधि बितायें ?
जीवन की धड़कन में रहता पुलकों का पागलपन
गा जो नहीं सका अधरों से, वह पीड़ा सहता हूं !
कह जो नहीं सका जग से, वह तारों से कहता हूं !

नील गगन है, मटमैली धरती है, क्षितिज नहीं है
सपनों के जल मे जागृति का प्रफुलित जलज नहीं है
सपने सुंदर हैं, जीवन को कैसे कहूं असुन्दर ?
टिक न सका जिनमें कुछ भी, उन भावों में रहता हूं !
कह जो नहीं सका जग से, वह तारों से कहता हूं !

तारो, तुम्हें किसी दिन तो इस धरती पर लाना है
और चांद को चूम किसी दिन मन ही बहलाना है
चॉद सितारों की प्रदर्शनी धरती से देखी है
पलकों की नव-नाव दृष्टि की धारा है, बहता हूं !
कह जो नहीं सका जग से, वह तारों से कहता हूं !



रूप नहीं जो जला न डाले मन को

मत गाओ, मेरा गान मचल जायेगा !

फूलों से कह दो, निर्जन में मुसकायें
भौंरों के मन की सोयी पीर जगायें
कोयल के पंखों की उड़ान से ओझल
अमराई महके कहीं बौर से बोझल !
तुम हँसो न, मेरा प्राण मचल जायेगा !
मत गाओ, मेरा गान मचल जायेगा !

पर खिलें न कलियाँ, वह कैसी क्यारी है
कैसा सावन ? यदि घटा न कजरारी है
वह रूप नहीं, जो जला न डाले मन को
वह जिया नहीं, जो वार न दे जीवन को
तुम प्यार न दो, अरमान मचल जायेगा !
मत गाओ, मेरा गान मचल जायेगा !

कलियों को खिलने दो, बहार आने दो
मत रोको, गीतों की फुहार आने दो
फहराने दो बेसुध अपने आँचल को
ढुल जाने दो कटि की गगरी के जल को
मनुहार न दो, मेहमान मचल जायेगा !
मत गाओ, मेरा गान मचल जायेगा !



क्षितिज पा रहे अमृत-चुम्बन

अधरों के बंधन टूटे, पर हैं अटूट प्राणों के बंधन !

बाहों से बाहें छूटीं , दो देहों की गांठ खुल गयी
सप्त स्वर्ग की सहसा एक सजीली रात घुल गयी
प्रथम मिलन के पाश खुले हैं, किन्तु जुड़ गयी प्रीति चिरंतन !
अधरों के बंधन टूटे, पर हैं अटूट प्राणों के बंधन !

(शेष पृष्ठ छियानवे पर)

निराशा के क्षितिज का कूल

रात बीती और मुरझाये तुम्हारे फूल !

हंस रहे थे फूल, आंखों के पलक थे मौन
आंकता करतल चिबुक पर, प्रश्न-वाचक कौन
मिल गया कैसे निराशा के क्षितिज का कूल ?
रात बीती और मुरझाये तुम्हारे फूल !

प्राण की धड़कन लजाती सिमटते थे श्वास
उठ रहा था फूल तारों से तनिक विश्वास
पवन के पद चाप भी जैसे चुभाते शूल!
रात बीती और मुरझाये तुम्हारे फूल!

जानता था प्रिय तुम्हें है आंसुओं का खेल
तो विदा, होगा नहीं मेरा तुम्हारा मेल
-मुसकुराता हूं, तुम्हें देकर हृदय की भूल!
रात बीती और मुरझाये तुम्हारे फूल?



आंखों के अलि रूप-सुमन के यौवन का मकरंद पी चुके
पलकों की तितली, पुलकों के शलभ धार पल मस्त जी चुके
कोयल का मधुमास क्षणिक है, किन्तु अमर चातक का क्रन्दन
अधरों के बंधन टूटे, पर हैं अटूट प्राणों के बंधन !

इस मानस के रंगमंच पर सुधि के नूपुर बजते रहते
प्राणों के दर्पण पर सौ शृंगार संवरते, सजते रहते
जैसे जीवन की वसुधा के क्षितिज पर रहे अमृत-चुम्बन !
अधरों के बंधन टूटे, पर हैं अटूट प्राणों के बंधन !



दिल नहीं रहे तो आग लगा दूँ

मेरा दिल धड़के और किसी के सीने मे !

मेरे सीने में जोर नहीं अरमानों का
स्वागत न रहा इन जीवन के मेहमानों का
हू कुशल पसीना, खून व आँसू पीने मे !
मेरा दिल धड़के और किसी के सीने में !

सपनों की सब राहें रोकी मजबूरी ने
आशा छोड़ी मंजिल की, सुख की दूरी ने
लाचारी घुलती जाती मेरे जीने में!
मेरा दिल धड़के और किसी के सीने में!

दिल नहीं रहे तो आग लगा दूं जीवन में
जो सुलग उठे मुझ में, फिर जग में, जन जन में
हों तार तार सब अलग कि आंचल झीने में!
मेरा दिल धड़के और किसी के सीने में!



सूखी कलियों का किसने हार बनाया

सबने ही प्यार किया, किसने है पाया ?
क्यों नहीं किसी ने बिना तड़प के गाया ?

अपनी चितवन को आँख समझ कब पाती ?
अधरों से निज मुसकान न चूमी जाती
जीवन की सबसे गूढ़ पहेली जीवन
यौवन को यौवन उलझन है मन को मन !
घेरे रहती है क्यों प्रकाश को छाया ?
क्यों नहीं किसी ने बिना तड़प के गाया ?

निरंकार देव

फूलों से भर जाते काँटे की झोली
निर्जन में गूँज गयी कोयल की बोली
सावन की अँधियारी को मिलती बिजली
फूलों से बोल नहीं पाती पर तितली !
सूखी कलियों का किसने हार बनाया ?
क्यों नहीं किसी ने बिना तड़प के गाया ?

तुम मेरे हो, या मेरी हैं पीड़ाएँ
वेदना मुझे जो, तुमको हैं क्रीड़ाएँ
तुम प्राणों को तड़पाने ही आ जाते
तुम एक आह हो भरते, हम मुसकाते !
अपने आँसू से किसने हाल छुपाया ?
क्यों नहीं किसी बिना तड़प के गाया ?

जग ने मुझको जाना, तुमको कब जाना
मैं तुमको ही, जग को न कभी पहचाना
तुमने न मुझे ही और जगत को माना
कैसे संभव हो यह गुत्थी सुलझाना ?
अद्भुत है सचमुच विवश प्रणय की माया !
सबने ही प्यार किया, किसने है पाया,
क्यों नहीं किसी ने बिना तड़प के गाया ?





जगदीश चतुर्वेदी

जन्म· 15 अगस्त, 1929
शिक्षाः एम एम (दर्शन)

सन् 1945 तक उत्तर प्रदेश के विभिन्न स्थलो पर रहने और अध्ययन करने के बाद 1946 से राजस्थान को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। मूलतः कवि किन्तु जीविका - का साधन लेखन और पत्रकारिता। हिन्दी अंग्रेज़ी के गद्य पद्य पर समान अधिकार।

दुर्गासप्तशती के पूर्वांगो और उत्तरांगों का संस्कृत से अंग्रेजी मे और प्रेमचन्द के अनेक उपन्यासो का हिन्दी से अंग्रेजी मे अनुवाद। जयपुर से प्रकाशित इतिहास, कला, साहित्य, मानवशास्त्र आदि विषयों की दर्जनो पुस्तको के निर्माण और प्रकाशन मे सहयोग।

कुछ काव्य पुस्तिकाओ के लेखन पर राज्य सरकार के कोपभाजन हुए और जनसम्पर्क अधिकारी का पद छोड़ना पड़ा।

संघर्षशील कवि उपन्यासकार एवं स्वतत्र लेखक-पत्रकार के रूप में कम से कम दो दर्जन बालोपयोगी एवं प्रौढ़ोपयोगी पुस्तक-पुस्तिकाओं के रचयिता। हिन्दी अंग्रेजी के अनेक दैनिक पत्रों से जुडे और अलग हुए।

प्रस्तुत पुस्तक मे उनकी काव्य-यात्रा के प्रथम चरण की रचनाए संकलित हैं, जो पाँच दशक बाद आज भी ताज़ी और नयी हैं।